

वृक्ष की आत्मकथा

Vriksh Ki Atmakatha

वृक्ष, पेड़, दरख्त, जैसे कई नामों से पुकारा जाता है, मुझे। याँ मेरी सत्ता व्यापक है। सारे संसार में मेरा अस्तित्व विद्यमान है। मेरी जातियाँ तो अनगिनत हैं ही, रंग-रूप और आकार-प्रकार भी अनेक हैं। मेरा कोई भाई बहुत मोटे मद-काठ (तने) वाला हुआ करता है और कोई पतले वाला। इसी तरह किसी का शरीर और बनावट खूब फैलावदार हुआ करती है और किसी की अत्यन्त सिमटे हुए। कोई छोटा-सा होता है और कोई सीधा और ऊँचा तना हुआ, लगता है जैसे आकाश को छू रहा हो।

मैं वृक्ष हूँ। मेरे हर रूप पर कोई-न-कोई फूल अवश्य खिला करता है। यह अलग बात है कि खेलने वाला कोई फूल तो मधुर सुगन्ध से भरा-पूरा रहा करता है, जबकि कोई दुर्गन्ध और कोई निर्गन्ध हुआ करता है। मौसम के अनुसार विकास भी सभी का अवश्य हुआ करता है। सभी के रंग भी अपने-अपने हुआ करते हैं। एक और बात भी ध्यान देने वाली है और वह यह कि मेरे किसी जाति के भाई के तन पर काँटों की भरमार रहा करती है, जबकि बहुतों पर मेरे समान कतई कोई काँटा आदि नहीं रहा करता। पत्तों के आकार भी प्रायः सभी के अपने-अपने और एक-दूसरे से अलग हुआ करते हैं। इसी तरह कुछ वृक्ष मधुर रसाल फलों से लदते तो अवश्य हैं; पर वे मनुष्य तो क्या पक्षियों तक के खाने के काबिल नहीं हुआ करते।

मेरे इस खिले हुए, झबरेदार और छतरी जैसे किन्तु हरे-भरे स्वरूप को देख कर आप मुग्ध हो रहे हैं न; मेरी खूब प्रशंसा भी कर रहे हैं। पर याद रखिए, प्रकृति माँ से ऐसा सघन-सुन्दर स्वरूप पाने के लिए मुझे बड़ी साधना करनी पड़ी और कष्टपूर्ण जीवन बिताना पड़ा है। यह तो मैं नहीं जानता कि इस एकान्त वन में मेरा रोपण किसने किया था-लगता है, माँ पृथ्वी और प्रकृति ने ही ऐसा किया होगा; पर जब मैं बीज-रूप में मिट्टी के अन्दर धरती का ताप सहन करता, भीतर-ही-भीतर चलने वाली कई तरह की रासायनिक क्रियाओं के प्रभाव से प्रभावित होता हुआ, कभी पानी और शीत से काँपता हुआ सड़-गल रहा था; तब लगता था कि जैसे मेरा अस्तित्व एकदम मिट्टी में मिल कर समाप्त ही हो जाएगा। लेकिन

एक दिन सहसा धरती का आँचल फूटा और मैं एक नन्हें अंकुर के रूप में सिर उठाए बाहर आ गया। बाहर निकलने पर ताजी हवा के झोंके के लगने से मेरा दम-मैं-दम आया और मैं धीरे-धीरे बड़ा होने लगा, प्रगति और विकास करते हुए ऊपर उठने लगा। जब मैं लगभग डेढ़-दो मीटर तक ऊपर उठ गया तब मेरे कन्धों से बाहे अर्थात् डालियाँ फूट कर ऊपर उठने तथा फैलने लगी। इस प्रकार विकास की प्रक्रिया में पड़ कर मेरा तन मन रस सिक्त होकर फैलता गया। फिर ऋतु के प्रभाव से मुझ पर फल-फूल भी आने लगे। फल उगने पर पक्षियों की चोंचें तो सहनी ही पड़ीं, आस-पास के देहातों से आने वाले बच्चों के मारे पत्थर भी सहन करने पड़े। अब तो यह प्रतिवर्ष का क्रिया-कलाप बन चुका है। मैं समझने और मानने लगा हूँ कि मेरे जीवन की वास्तविकता और सफलता-सार्थकता भी इसी सब झेलने-सहने में ही है।

मैं प्रकृति-पुत्र वृक्ष हूँ। प्रकृति ने मुझे धरती पर कई शुभ एवं महत्त्वपूर्ण कार्य करने के लिए जन्म दिया है। मैं प्रकृति के सजीव स्वरूप से तो मानवता का परिचय कराया। ही करता हूँ, उसके तथा धरती के पर्यावरण का सन्तुलन भी बनाए रखता हूँ। धरती पर कृषि-व्यवस्था तथा पीने के जल की पूर्ति के लिए होने वाली वर्षा का एक महत्त्वपूर्ण कारण मैं वृक्ष ही हूँ। यही नहीं, मैं अनेक प्रकार के प्रदूषित और जहरीले प्रभावों से भी इस धरती और उस पर रहने वाले सभी प्राणियों की रक्षा करता हूँ। वायु-मण्डल एवं वातावरण में ताजी ऑक्सीजन (प्राण-वायु) का संचार सभी प्रणालियों की श्वसन-क्रिया को सहज बनाए रखता हूँ। तरह-तरह के पक्षी मेरी सघन डालियों पर अपने घोंसले बनाकर आश्रय तो पाते ही हैं, हवा को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने का कार्य भी मैं ही किया करता हूँ। मेरी छाया में मनुष्य, पशु-पक्षी आदि सभी तरह के प्राणी शीतलता और विश्राम पाया करते हैं। पत्थर सह कर भी बदले में मैं धरती के लोगों को हर साल ताजे फल-फूल दिया करता हूँ। यही नहीं, प्रगति और विज्ञान के इस युग में भी ईंधन की समस्या मेरे अंगों से ही हल की जाती है। यहाँ तक कि सोने-बैठने और घरों, दफ्तरों, बैठकखानों की शोभा बढ़ाने के लिए मुझ से प्राप्त लकड़ी की ही चारपाइयाँ तथा अन्य सभी तरह का फर्नीचर आदि बनाए जाते हैं। इस प्रकार मेरा जन्म ही निरन्तर मानवता की सेवा करते रहने के लिए हुआ है; वह मैं तन, मन, धन से हमेशा करता रहता हूँ।

इतना सब होते हुए भी आज का स्वार्थी मनुष्य मेरे साथ, मेरे बहन-भाइयों के साथ उचित एवं न्यायसंगत व्यवहार नहीं कर रहा, यह जान-सुनकर मुझे बड़ा ही दुःख होता है। अपने

निहित स्वार्थों की पूर्ति करने के लिए आज का मनुष्य मेरी जाति और वंश का सर्वनाश करने पर तुला बैठा है। वातावरण असन्तुलन और घोर प्रदूषण जैसी समस्याओं से दो-चार होते रह कर भी आज का मनुष्य मेरा मूल्य और महत्त्व अनदेखा कर रहा है। वह मुझे समूल काट कर समाप्त तो करता जा रहा है। पर अपने ही हित में मेरे जैसे को जीवित रखने के लिए हमारा नया आरोपण नहीं कर रहा है। है न दुःख और चिन्ता की बात। पता नहीं यह ज्ञान-विज्ञानी और सब प्रकार से शिक्षित मानव इस तथ्य को क्यों नहीं समझना चाहता कि मेरे अस्तित्व के साथ ही उसका अपना अस्तित्व और भविष्य छिपा हुआ है। मेरी सुरक्षा में ही सम्पूर्ण सृष्टि की सुरक्षा है।